|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

3/3 (श्लोक 22-34), रविवार, 05 अप्रैल 2026

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/-2IiNFJcy7w

आत्मा का परमात्मा के साथ योग

श्रीहनुमान चालीसा पाठ, मधुर गीता वन्दना एवं दीप प्रज्वलन के पश्चात् आज के सत्र का प्रारम्भ हुआ। पिछले तीन श्लोकों को दोहराते हुए बताया

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते |
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ||

सोमरस प्राशन करने वाले, सोमरस देने वाले, सोमवल्ली के पत्तों से हवन करने वाले, तीन वेदों में लिखा हुआ जो विधान है, उस विधान के अनुसार यज्ञ करने वाले लोग यदि पाप मुक्त हो जायें तो फिर उनको इन्द्रलोक में स्थान प्राप्त हो जाता है और वे दिव्य भोग पाते हैं। वे भोग देवताओं को भी दुर्लभ हैं परन्तु उनके लिए पापों से मुक्त होना अनिवार्य है। सभी सामग्री एकत्रित कर यज्ञ करना तो सरल है परन्तु पाप मुक्त होना अत्यन्त दुर्लभ है। कुछ पाप हम सभी अनजाने में करते हैं परन्तु कुछ पाप जाग्रत रहते हुए भी करते हैं।

भोजन बनाने हेतु जब हम अग्नि प्रज्वलित करते हैं तो उसकी ऊष्मा से आस-पास के जीव मर जाते हैं, जूते पहनकर चलते-चलते कुछ कीट मर जाते हैं। ये सभी पाप अनजाने में होते हैं। तब भी इन सभी पापों से मुक्ति का मार्ग क्या है? कितने ही लोगों के मन हमने दुखाये होंगे, कितने ही लोगों के साथ हमने कटु वचन कहे होंगे, कुछ गलत कार्यों से हमने कितने ही लोगों को दोषी बनाया होगा, कितने ही लोगों को धोखा दिया होगा, ये सभी पाप गिने जा रहे हैं। चन्द्रगुप्त के बहीखाते में सभी कुछ लिखा जा रहा है, जब हम वहाँ पहुँचेंगे तो सब हिसाब देखा जायेगा और उसी के अनुसार निश्चित किया जायेगा कि हमें कहाँ भेजा जाये? पाप मुक्ति का समाधान हमें सोचना ही होगा। हमारे मन के भीतर जो शत्रुता का भाव भरा हुआ है, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि से मन भरा हुआ है, उनसे हमें मुक्त होना पड़ेगा। यह मुक्ति एक साँस में भी सम्भव है। अन्तिम श्वास के समय शारीरिक दर्द हमें पीड़ा देगा जबकि हमें यह बात पता है कि मैं शरीर नहीं हूँ। जब प्रश्न उठता है-

कोऽहम्, कोऽहम्, कोऽहम्?

तब उत्तर भी मिलता है-

सोऽहं, सोऽहं, सोऽहं।

हमारे ऋषि-मुनियों ने इस प्रश्न का उत्तर ढूँढने में अपना सारा जीवन लगा दिया। सोऽहं अर्थात् मैं वो हूँ। वो कौन? वो परमपिता

परमात्मा असीम शक्ति वाला, इन तीन लोकों का नियन्ता मेरे हृदय में बैठा हुआ है।

हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति

वे मेरे हृदय में विराजमान हैं पर हमने कभी अपना हृदय खोला ही नहीं। जैसे किसी पुराने बन्द कमरे को खोलने पर दुर्गन्ध बाहर निकलती है वैसे ही हृदय को खोलने पर भी दुर्गन्ध (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर रूपी) बाहर निकलेगी, तदुपरान्त प्रेम की अविरल धारा बाहर बहने लगेगी। प्रेम की इस अविरल धारा को कहाँ अर्पण करना है, इसमें भी हमने त्रुटि कर दी। मानव, पशु पर प्रेम बहाना आरम्भ कर दिया परन्तु श्रीभगवान् को भूल गये। मैं 'वो' हूँ, मैं शरीर नहीं हूँ। मैं पञ्चेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ नहीं हूँ। न मैं मन हूँ, न बुद्धि हूँ, न अहङ्कार हूँ।

चिदानन्द रूपम्, शिवोऽहम्, शिवोऽहम्।

मैं वह शिव हूँ। मैं सुन्दर हूँ। मैं सत्य हूँ। यह सत्य शिव का स्वरूप जैसे ही ध्यान में आयेगा तब शरीर की पीड़ा ध्यान नहीं आयेगी परन्तु हम अपना पूरा मन श्रीभगवान् के चरणों में लगाते नहीं हैं।

कोई बच्चा मैदान में फुटबॉल खेलने जाता है और उसे चोट आ जाती है। रक्त बह रहा है परन्तु बच्चा खेलने में इतना व्यस्त है कि उसे ध्यान ही नहीं रहता। जब घर आता है तो माँ से कहता है कि मेरा पैर बहुत दर्द कर रहा है। माँ उसकी चोट देखकर उसे डॉक्टर के पास ले जाती है। बच्चा जब तक खेल रहा था तब तक उसे अपने शरीर का भान नहीं आया, लौट कर आने पर उसे शरीर का भान आया। क्या हम भी इसी प्रकार अपना मन श्रीभगवान् को अर्पण करते हैं कि अपने शरीर का भान ही भूल जाएँ। क्या इस प्रकार का अर्पण हमारे द्वारा भगवच्चरणों में होता है कि हम अपना अभिमान, अहङ्कार भी भूल जाएँ? यदि एक क्षण के लिए भी ऐसा हो जाये तो हम पाप मुक्त हो जायेंगे। यदि बैर का काँटा रह गया तो यही हमें पुनर्जन्म के लिए बाधित करेगा। वह काँटा आत्मा को चुभेगा और चिपकेगा। यही काँटा आत्मा को अगले जीवन की दिशा प्रदान करेगा।

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते।।

जब तक हमारे सञ्चित पुण्यों का क्षय नहीं हो जाता तब तक हमें स्वर्ग में रहने को मिलेगा। एक व्यक्ति ने जीवन भर पाप ही पाप किये परन्तु उसने अपने बेटे का नाम गोविन्द रख दिया। दिन भर गोविन्द ही गोविन्द पुकारता रहता, अन्तिम समय भी उसके मुँह से गोविन्द ही निकला और उसके सभी पाप नष्ट हो गये। हम अपने बच्चों के नाम श्रीभगवान् के नाम पर ही रख लें तो भी हमारा कल्याण हो जायेगा।

9.22

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां(य्ँ), ये जनाः(फ्) पर्युपासते।
तेषां(न्) नित्याभियुक्तानां(य्ँ), योगक्षेमं(व्ँ) वहाम्यहम्॥9.22॥

जो अनन्य भक्त मेरा चिन्तन करते हुए (मेरी) भली भांति उपासना करते हैं, (मुझ में) निरन्तर लगे हुए उन भक्तों का योगक्षेम (अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा) मैं वहन करता हूँ।

विवेचन- जो अनन्य भाव से मेरा चिन्तन करेगा, उसके जीवन का कल्याण तो होना ही है। हमने घर में मन्दिर बनाया है, मन्दिर में बैठते हैं, श्रीभगवान् का अभिषेक करते हैं। अभिषेक पूर्ण होने पर श्रीभगवान् ताम्र पात्र में डूब गये हैं और तभी फोन की घण्टी बजी। फोन पर बातें करने में व्यस्त हो गये। श्रीभगवान् पानी में बैठे प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह अनन्यभाव से चिन्तन नहीं है। यदि देश के प्रधानमन्त्री जी के पास जाना हो तब फोन की घण्टी बजे तो भी फोन नहीं उठाते। वहाँ उनके साथ अनन्य भाव से बात करते हैं। यहाँ श्रीभगवान् हमारी सब बात सुन रहे हैं। वे न हमारे भोग के भूखे हैं न ही पूजा करने के, वे तो हमारे भाव के ही भूखे हैं। उपासना की परिसीमा हो जाये ऐसी उपासना करनी चाहिये। हमारे सारे प्रेम का अभिषेक करके ही पुष्प चढ़ाना चाहिये। हम मन में उनका नित्य स्मरण करें और वे हमारा सारा योगक्षेम वहन करते हैं।

तेषां नित्याभियुक्तानां, योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

ऐसे अनन्य भाव से भक्ति करने वाले भक्त का चिन्तन स्वयं श्रीभगवान् रात-दिन किया करते हैं। हम उन्हें भूल जाएँ तो भी वे हमें नहीं भूलते। हम एक पग चलते हैं, श्रीभगवान् दस पग आगे चलते हैं।

एक बार एक भक्त से प्रसन्न होकर श्रीभगवान् उसकी जीवन यात्रा दिखाने ले गये। दोनों समुन्दर के किनारे कोमल रेत पर चल रहे थे। उस व्यक्ति ने देखा कि उसके कदम के साथ-साथ दो कदम और चलते हुए दिखायी दे रहे हैं। उसने पूछा ये किसके हैं। श्रीभगवान् ने बताया कि वे उस व्यक्ति के साथ-साथ चल रहे थे अतः दो कदम और दिखाई दे रहे हैं। आगे कण्टिका मार्ग दो ही पग के निशान दिखाई दे रहे थे। व्यक्ति ने कहा कि वाह भगवान्! कण्टिका मार्ग पर मुझे अकेले छोड़ दिया। श्रीभगवान् ने कहा कि ये दो पैरों के निशान मेरे ही हैं। मैं तुम्हें काँटों से बचाने के लिये अपनी गोद में लेकर चल रहा था। तेरा योगक्षेम वहन करना मेरा काम है। ऐसे में तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

9.23

येऽप्यन्यदेवता भक्ता, यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय, यजन्त्यविधिपूर्वकम्।।9.23।।

हे कुन्तीनन्दन! जो भी भक्त (मनुष्य) श्रद्धापूर्वक अन्य देवताओं का पूजन करते हैं, वे भी मेरा ही पूजन करते हैं, (पर करते है) अविधिपूर्वक अर्थात् देवताओं को मुझसे अलग मानते हैं।

विवेचन- भूतों की पूजा करने वाले भूतों को मिलेंगे और मेरी पूजा करने वाले मुझे मिलेंगे।

परमतत्त्व का पूजन करने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता। बाकी सभी लोकों से वापस आना ही है-

पाताल लोक, पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक, ब्रह्मलोक, तपोलोक, जमलोक आदि सभी लोकों को प्राप्त करके लौट कर आना पड़ेगा।

वास्तव में हमारा घर कौन सा है? हम कहाँ से आये हैं? पृथ्वी पर हमारा जो घर है, उस में आने की हमें कितनी उत्कण्ठा रहती है तो वास्तव में जो हमारा घर है वहाँ जाने की तो अधिक अभिलाषा होनी चाहिये। हम वहाँ जायें तो हमारा यहाँ वापस लौट कर आने का कोई काम नहीं है। ऐसा तभी होगा जब हम अनन्य भाव से उनकी शरण में जायेंगे।

9.24

अहं(म्) हि सर्वयज्ञानां(म्), भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति, तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते।।9.24।।

क्योंकि सम्पूर्ण यज्ञों का भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ; परन्तु वे मुझे तत्त्व से नहीं जानते, इसी से उनका पतन होता है।

विवेचन- हे अर्जुन! सकाम भक्ति करने वाले लोग श्रद्धा के सहित अन्य देवताओं की पूजा करते हैं, वे सकाम भक्ति करते हैं। वह भक्ति भी आखिर मुझ तक ही पहुँचेगी। जो गङ्गाजल अञ्जली में लेकर सूर्य को दिया, वह गङ्गाजल भी मैं ही हूँ और वह अर्क प्राप्त करने वाला भी मैं ही हूँ। चराचर सृष्टि में, सभी देवताओं में, मैं ही व्याप्त हूँ अतः तुम किसी भी देवता का श्रद्धा से पूजन करो, अन्ततोगत्वा वह मुझे ही प्राप्त होगा। 'मैं' का विसर्जन तो करना ही होगा। जब तक अर्जुन सोचते रहे कि ये मेरे गुरु हैं, मैं इन्हें कैसे मार दूँ तब तक अर्जुन का कुछ नहीं हुआ।

गुरूनहत्वा हि महानुभावान् श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके ।
हत्वार्थकामांस्तु गुरूनिहैव भुञ्जीय भोगान्धिरप्रदिग्धान् ।।

मेरे हाथ रक्तरञ्जित हो जायें और ऐसा पाप मुझसे हो जायेगा तो मैं कहाँ जाऊँगा? जब यह 'मैं' समाप्त हुआ तब श्रीभगवान् की वाणी का प्राकट्य हुआ।

9.25

यान्ति देवव्रता देवान्, पितृन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या, यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्।।9.25।।

(सकाम भाव से) देवताओं का पूजन करने वाले (शरीर छोड़ने पर) देवताओं को प्राप्त होते हैं। पितरों का पूजन करने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं। भूत-प्रेतों का पूजन करने वाले भूत-प्रेतों को प्राप्त होते हैं। (परन्तु) मेरा पूजन करने वाले मुझे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन- श्रीभगवान् कह रहे हैं कि सारे यज्ञों का भोक्ता मैं हूँ, स्वामी मैं हूँ परन्तु इन सभी देवताओं का हवि उन्हें जाना आवश्यक होता है। सभी पितरों को अर्क प्रदान करें। नवग्रहों को आहुतियाँ दें। ग्राम देवता, कुल देवता सभी का चिन्तन होता है। उनको हवि देकर तब यज्ञ के देवता का पूजन होता है। अन्ततोगत्वा सारे देवताओं को किया हुआ प्रणाम श्रीभगवान् को ही प्राप्त होता है। जिस प्रकार वर्षा की प्रत्येक बूँद नदी में मिलती है और नदी के साथ सागर में मिलती है, उसी प्रकार सभी देवताओं को किया गया प्रणाम उसी परमतत्त्व को प्राप्त होता है।

आकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रति गच्छति॥

9.26

पत्रं(म्) पुष्पं(म्) फलं(न्) तोयं(यँ), यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं(म्) भक्त्युपहृतम्, अश्नामि प्रयतात्मनः॥9.26॥

जो भक्त पत्र, पुष्प, फल, जल आदि (यथासाध्य एवं अनायास प्राप्त वस्तु) को प्रेमपूर्वक मेरे अर्पण करता है, उस (मुझमें) तल्लीन हुए अन्तःकरण वाले भक्त के द्वारा प्रेमपूर्वक दिये हुए उपहार (भेंट) को मैं खा लेता हूँ अर्थात् स्वीकार कर लेता हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि प्रेम से चढ़ाये हुये एक पत्र से भी मैं प्रसन्न होता हूँ। आम का मौसम आया तो पहला आम श्रीभगवान् को अर्पण करें। प्रेम से दिया फल, फूल, पत्ता, तुलसी दल सभी कुछ ग्रहण करते हैं श्रीभगवान्। श्रीभगवान् को इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि हमने बर्तन सोने-चाँदी के परोसे हैं अथवा मिट्टी के। हमने छप्पन भोग परोसे अथवा प्रेम से बनाया एक पदार्थ। वे तो भाव के भूखे हैं।

शङ्कराचार्य भगवान् ने तो कहा कि कोई साधन नहीं है तो मन से पूजन करो।

रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं
नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम् ।
जातीचम्पकबिल्वपत्ररचितं पुष्पं च धूपं तथा
दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥

हे दयालु पशुपति (शिव)! रत्नों से बने आसन, बर्फ जैसे ठण्डे जल से स्नान, दिव्य वस्त्र, कस्तूरी-चन्दन, चमेली-चम्पा-बिल्वपत्र के फूल, धूप और दीया-ये सब मैंने अपने हृदय में कल्पित करके आपके लिए सजाये हैं, कृपया इन्हें स्वीकार करें।

सौवर्णे नवरत्न खंडरचिते पात्र धृतं पायसं।
भक्ष्मं पंचविधं पयोदधि युतं रम्भाफलं पानकम्॥

शाका नाम युतं जलं रुचिकरं कर्पूर खंडौज्वलं।

ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु॥

मैंने विविध प्रकार के रत्न जड़ित नवीन स्वर्णपात्र में खीर, दूध और दही सहित पाँच प्रकार के स्वाद वाले व्यञ्जनों के सङ्ग कदलीफल, शर्बत, शाक, कपूर से सुवासित और स्वच्छ किया हुआ मृदु जल एवं ताम्बूल आपको मानसिक भावों द्वारा बनाकर प्रस्तुत किया है। हे कल्याण करने वाले! मेरी इस भावना को स्वीकार करें।

छत्रं चामर योर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निमलं।
वीणा भेरि मृदंग काहलकला गीतं च नृत्यं तथा॥

साष्टांग प्रणतिः स्तुति-र्बहुविधा ह्येतत्समस्तं ममा।
संकल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो॥

हे भगवन्! आपके ऊपर छत्र लगाकर चंवर और पँखा झल रहा हूँ। निर्मल दर्पण, जिसमें आपका स्वरूप सुन्दरतम् व भव्य दिखाई दे रहा है, भी प्रस्तुत है। वीणा, भेरी, मृदङ्ग, दुन्दुभि आदि की मधुर ध्वनियाँ आपकी प्रसन्नता के लिए की जा रही हैं। स्तुति का गायन, आपके प्रिय नृत्य को करके मैं आपको साष्टाङ्ग प्रणाम करते हुए सङ्कल्प रूप से आपको समर्पित कर रहा हूँ। हे प्रभो! मेरी यह नानाविधि स्तुति की पूजा को कृपया ग्रहण करें।

आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं।
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः॥

संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो।
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम्॥

हे शङ्करजी, मेरी आत्मा आप हैं। मेरी बुद्धि आपकी शक्ति पार्वतीजी हैं। मेरे प्राण आपके गण हैं। मेरा यह पञ्च भौतिक शरीर आपका मन्दिर है। सम्पूर्ण विषय भोग की रचना आपकी पूजा ही है। मैं जो सोता हूँ वह आपकी ध्यान समाधि है। मेरा चलना-फिरना आपकी परिक्रमा है। मेरी वाणी से निकला प्रत्येक उच्चारण आपके स्तोत्र व मन्त्र हैं। इस प्रकार मैं आपका भक्त जिन-जिन कर्मों को करता हूँ, वह आपकी आराधना ही है।

यह सब भाव का ही माहात्म्य है। यह मन से ही करना है। आप जहाँ हैं, वहीं बैठ जायें, रुकना ही आवश्यक है।

भगवान् बुद्ध एक राजा के यहाँ रुके। जब वे चलने लगे तो राजा ने कहा कि आज रुक जाइये, सुबह चले जाइयेगा। रास्ते में अँगुलीमाल नाम का डाकू है जो राहगीरों को मारता है, उनकी अँगुली काट कर उनकी माला बनाकर पहनता है। रात के समय आपका जाना ठीक नहीं होगा। भगवान् बुद्ध ने कहा कि तब तो अभी ही जाना होगा।

अभयं सत्त्वसंशुद्धिः

मैं ही भयभीत रहूँगा तो लोगों की क्या बात करूँगा। एक भी शिष्य साथ नहीं गया। भगवान् अकेले गये और रास्ते में अँगुलीमाल ने पकड़ लिया। उनका तेज देखकर वह पशोपेश में था पर फिर उसने अपना खड्ग निकाला और बोला जो है वो दे दो। श्रीभगवान् ने कहा कि जो है वो ले लो। अँगुलीमाल ने कहा कि रुक जाओ, तुम ऐसे नहीं जा सकते। भगवान् ने कहा कि मैं तो रुका हुआ हूँ, तू कब रुकेगा? इस एक वाक्य से अँगुलीमाल सोच में पड़ गया कि मैं यह सब क्या कर रहा हूँ। भगवान् के चरणों में गिर गया और बोला कि मैं रुक गया बस अब मुझे उपदेश दीजिये, मेरा कल्याण करिये। यह रुकना ही आवश्यक है।

तब भगवान् बुद्ध ने अँगुलीमाल का उद्धार किया। हम रुक नहीं रहे हैं, दौड़ रहे हैं। भाव के साथ आरती करना। यह रुकना ही पहुँचने का आरम्भ है। हम रुक जायें और सही दिशा को पकड़ लें इसलिए तो गीता जी को सीख रहे हैं। भाव की प्रधानता है, पूजा की सामग्री की नहीं। श्रीभगवान् तो पत्र से, पुष्प से अथवा एक लौटा पानी से भी प्रसन्न हो जाते हैं।

9.27

यत्करोषि यदश्नासि, यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय, तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।9.27।।

हे कुन्तीपुत्र ! (तू) जो कुछ करता है, जो कुछ भोजन करता है, जो कुछ यज्ञ करता है, जो कुछ दान देता है (और) जो कुछ तप करता है, वह (सब) मेरे अर्पण कर दे।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि तुम जो भी कर्म कर रहे हो, मुझे अर्पण करते चले जाओ। यही महत्त्वपूर्ण है, जिस क्षण तुमने अर्पण कर दिया, तुम पाप से मुक्त हो जाते हो। अर्पण कर दिया तो पाप भी श्रीभगवान् के पास चला जायेगा ।

9.28

शुभाशुभफलैरेवं(म्), मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
सन्न्यासयोगयुक्तात्मा, विमुक्तो मामुपैष्यसि।।9.28।।

इस प्रकार (मेरे अर्पण करने से) कर्म बन्धन से और शुभ (विहित) और अशुभ (निषिद्ध) सम्पूर्ण कर्मों के फलों से (तू) मुक्त हो जायगा। ऐसे अपने सहित सब कुछ मेरे अर्पण करने वाला (और) सबसे सर्वथा मुक्त हुआ (तू) मुझे प्राप्त हो जायगा।

विवेचन- अर्जुन पूछते हैं कि ये मेरे हैं, मैं ऐसा नहीं भी सोचूं पर ये मानव तो हैं ही। इनकी हत्या का पाप तो मुझे चढ़ेगा ही। श्रीभगवान् कहते हैं कि शुभ और अशुभ सभी कर्मों को फलों के साथ मुझे अर्पण कर दो। मैं तुम्हे कर्म के बन्धन से मुक्त करके मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर कर दूँगा। यदि तुमने मुझे अर्पण नहीं किया तो तुम कर्म के बन्धन में फंसोगे। मुझे स्मरण करके युद्ध करो, मुझे याद करके बाण चलाओ। मेरे योग्य जो भी कर्म हैं वो ही मुझे अर्पण करोगे, सभी कर्म मुझे अर्पण नहीं कर सकते हो। मुझे भोग में माँस दोगे तो मैं नहीं खाऊँगा। तुम इस संन्यासयोग का आचरण करो।

ट्रस्ट को न्यास कहा गया है। चैरिटेबल ट्रस्ट को न्यास कहते हैं। वहाँ कोई मालिक नहीं होता है। सभी वहाँ मात्र कार्य करते हैं।

समत्व के साथ किया हुए न्यास को संन्यास कहते हैं।

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी, सरस्वती
अपनी ही देह को देवता का मन्दिर मानकर, स्वच्छ रखने हेतु जल को गङ्गाजल मानकर स्नान करना चाहिये। जागने, सोने, भूमि पर पैर रखने से पूर्व ईश्वर का स्मरण करना चाहिये। भूमि माता, देश माता, चन्दा मामा, ऐसा भाव हमारे ऋषियों ने दिया। इन्हीं भाव के साथ जीने वाला व्यक्ति सन्त हो जाता है। केवल भगवे वस्त्र पहनने वाला ही सन्त नहीं है।

एक बार वन से गुजरते समय नारद मुनि को रत्नाकर (वाल्मीकि) ने लूटने का प्रयास किया। नारद जी ने उनसे पूछा कि क्या उनका परिवार उनके पापों का भागीदार बनेगा? वाल्मीकि ने जब अपने परिवार से यह सवाल पूछा तो सभी ने साथ देने से मना कर दिया। इस घटना से उनका हृदय परिवर्तित हो गया और वे नारद जी के शिष्य बन गये। नारद जी ने उन्हें राम-नाम का जाप करने की शिक्षा दी। उन्होंने कहा मुझे तो कहना ही नहीं आता। नारद जी ने कहा कि मरा-मरा कहना आरम्भ कर दो। उन्होंने ऐसा ही किया। मरा-मरा कहते-कहते राम-राम हो गया। इसी से उनके जीवन का कल्याण हो गया।

9.29

समोऽहं(म्) सर्वभूतेषु, न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां(म्) भक्त्या, मयि ते तेषु चाप्यहम्।।29।।

मैं सम्पूर्ण प्राणियों में समान हूँ। (उन प्राणियों में) न तो कोई मेरा द्वेषी है (और) न कोई प्रिय है। परन्तु जो प्रेमपूर्वक मेरा भजन

करते हैं, वे मुझ में हैं और मैं भी उनमें हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि सारे जीव मेरे ही हैं परन्तु जो मुझे भजेगा, मैं उनमें अधिक रहूँगा। मैं सम्पूर्ण प्राणियों में समान हूँ। उनमें न तो कोई मेरा द्वेषी है, न कोई प्रिय है परन्तु जो प्रेमपूर्वक मेरा भजन करते हैं, वे मुझ में हैं और मैं भी उनमें हूँ।

9.30

अपि चेत्सुदुराचारो, भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः(स्), सम्यग्व्यवसितो हि सः।।9.30।।

अगर (कोई) दुराचारी से दुराचारी भी अनन्य भक्त होकर मेरा भजन करता है (तो) उसको साधु ही मानना चाहिये। कारण कि उसने निश्चय बहुत अच्छी तरह कर लिया है।

विवेचन- किसी व्यक्ति ने जीवन भर दुराचार किया और अन्तिम क्षण में मेरी शरण में आ गया तो उसके सभी पाप क्षमा कर दूँगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम भी ऐसा करना आरम्भ कर दें। हम नहीं जानते कि हमारा कौन सा क्षण मृत्यु का क्षण होगा इसलिए हम अभी दुराचार से निकल कर हर साँस को ईश्वर को समर्पित करते चलें। हम छोटे-छोटे पद से प्रसन्न होते हैं परन्तु परमपद तो श्रीभगवान् के चरणों में है।

9.31

क्षिप्रं(म्) भवति धर्मात्मा, शश्वच्छान्तिं(न्) निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि, न मे भक्तः(फ्) प्रणश्यति।।9.31।।

(वह) तत्काल (उसी क्षण) धर्मात्मा हो जाता है (और) निरन्तर रहने वाली शान्ति को प्राप्त हो जाता है। हे कुन्तीनन्दन ! मेरे भक्त का पतन नहीं होता (ऐसी तुम) प्रतिज्ञा करो।

9.32

मां(म्) हि पार्थ व्यपाश्रित्य, येऽपि स्युः(फ्) पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्राः(स्), तेऽपि यान्ति परां(ङ्) गतिम्।।9.32।।

हे पृथानन्दन ! जो भी पाप योनि वाले हों (तथा जो भी) स्त्रियाँ, वैश्य और शूद्र (हों), वे भी सर्वथा मेरे शरण होकर निःसन्देह परमगति को प्राप्त हो जाते हैं।

9.33

किं(म्) पुनर्ब्राह्मणाः(फ्) पुण्या, भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं(म्) लोकम्, इमं(म्) प्राप्य भजस्व माम्।।9.33।।

(जो) पवित्र आचरण वाले ब्राह्मण और ऋषिस्वरूप क्षत्रिय भगवान् के भक्त हों, (वे परम गति को प्राप्त हो जायँ) इसमें तो कहना ही क्या है। (इसलिये) इस अनित्य (और) सुखरहित शरीर को प्राप्त करके (तू) मेरा भजन कर।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि सभी इस परम गति के अधिकारी हैं। ऐसा कोई नहीं है जो इसे प्राप्त नहीं कर सकता। ब्राह्मण हो अथवा क्षत्रिय, सभी के लिए यह मार्ग खुला हुआ है।

9.34

मन्मना भव मद्भक्तो, मद्याजी मां(न्) नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवम्, आत्मानं(म्) मत्परायणः।।9.34।।

(तू) मेरा भक्त हो जा, मुझमें मन वाला हो जा, मेरा पूजन करने वाला हो जा (और) मुझे नमस्कार कर। इस प्रकार अपने-आपको (मेरे साथ) लगाकर, मेरे परायण हुआ (तू) मुझे ही प्राप्त होगा।

विवेचन- हे अर्जुन, तुम मेरे ऐसे भक्त बन जाओ कि तुम्हारे मन में, मैं बैठ जाऊँ।

परमपिता परमात्मा के ये शब्द श्रीकृष्ण के मुख को साधन बनाकर बाहर निकल रहे हैं। तुम विनम्रता के साथ झुक जाओ और अपनी आत्मा को परमात्मा के साथ योग कर दो। तुम मेरा ही अंश हो। तुम जैसे ही मेरे परायण हो जाओगे तब तुम मुझे प्राप्त कर लोगे।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता- उषाश्री दीदी
प्रश्न- श्लोक क्रमाङ्क अट्ठाईस को समझना चाहती हूँ।
उत्तर- शुभ और अशुभ फल को ऐसे समझ सकते हैं- अर्जुन तो युद्ध के क्षेत्र में हैं और वे जीव-हत्या करने वाले हैं। ऐसे नरसंहार का जो कृत्य है, वह तो अशुभ कार्य हुआ। ऐसा अशुभ कार्य श्रीभगवान् ने अर्जुन को कहा है कि मारो, अब यह अशुभ कार्य करते समय भी कर्त्तव्य की भावना हो और कर्त्तव्य के भाव से किया गया कार्य अशुभ भी हो तब भी वह श्रीभगवान् को अर्पित हो जाता है तथा उस कर्म के फल से आप मुक्त हो जाते हैं।

कर्त्तव्य के भाव का अर्थ है कि अर्जुन जब उन लोगों को मार रहे थे तो उनके मन में कर्त्तव्य का भाव होना चाहिये था।

जब आप ग्यारहवें अध्याय में पहुँचेंगे तो पढ़ेंगे कि श्रीभगवान् ने अपना विराट रूप जब दिखाया तब अर्जुन ने देखा कि उस विराट रूप में एक मुँह से अग्नि बाहर निकल रही है और द्रोणाचार्य, भीष्माचार्य, कर्ण आदि योद्धा उस अग्नि में कीट-पतङ्गों की भाँति उनके मुख में प्रवेश कर रहे हैं और जल कर नष्ट हो रहे हैं तथा बचे-खुचे जो थे, वे उनके भयङ्कर दाँतों के बीच में फँस रहे हैं और श्रीभगवान् उनको चबा रहे हैं। ऐसा दृश्य देखकर वे भयकम्पित हो गये और अर्जुन ने श्रीभगवान् से पूछा कि "यह मैं क्या देख रहा हूँ? हे भगवान्! ये सारे नरवीर, ये योद्धा कैसे मर रहे हैं?" तब श्रीभगवान् ने कहा कि "हाँ! मैंने ही द्रोण, भीष्म, जयद्रथ आदि को मार दिया है। अब तू बस बाण चला और इनको मारकर युद्ध में इनको जीत ले।"

इसी अध्याय के अन्त में श्रीभगवान् अर्जुन से कहते हैं, "तू निर्वैर बन। तेरे मन में वैर की भावना न हो। यह वैर का काँटा चुभेगा तो फिर पुनर्जन्म होगा। तू इनको इसलिए नहीं मार रहा है कि तुझे राज्य चाहिये अपितु इसलिए कि ये अतातायी हैं। ये दुष्ट हैं और तू क्षत्रिय है। क्षत्रिय का कर्त्तव्य ऐसे अततायी लोगों को मारना है जैसे न्यायाधीश का कर्त्तव्य है कि कोई आतङ्कवादी आये तो उसको देहदण्ड दे इसलिये कसाब को मृत्युदण्ड देते हुए वह डगमगाता नहीं है क्योंकि वह कर्त्तव्य भाव के साथ अपना कार्य करता है।

प्रश्नकर्ता- दर्शन भैया
प्रश्न- हम कभी भगवद्गीता के श्लोक आदि पढ़ते हैं तो कभी-कभी दूसरे धर्म वाले पूछते हैं कि आपके श्रीभगवान् शादी क्यों करते हैं और उनके बच्चे क्यों है? जैसे शिवजी ने शादी की, उनके बच्चे थे तथा श्रीकृष्ण भी शादी करते हैं, उनके बच्चे थे। यदि वे श्रीभगवान् हैं तो उनको शादी की क्या आवश्यकता है और बच्चों को जन्म देने की क्या आवश्यकता है?
उत्तर- भगवद्गीता में बहुत विस्तार के साथ में ज्ञानयोग, भक्तियोग आदि के माध्यम से बताया गया है कि ये सारे योग उस परमपिता को पाने के अलग-अलग योग हैं। कोई भी एक साधन आपको दिया जाए कि यह एक ही मार्ग है, दूसरा कोई मार्ग नहीं। हो सकता है कि आपकी मनोवत्ति कुछ अलग प्रकार की थी इसलिए आपको वह साधन सुलभ नहीं लगा फिर आप क्या

करेंगे?

हिन्दू धर्म की महानता इसी बात में है। यह सनातन की महानता है कि जिसको जैसे सुलभ लगे वैसे श्रीभगवान् उसने बना लिये और चराचर सृष्टि में वे व्याप्त हैं तो जैसा रूप श्रीभगवान् को देना चाहा वैसे रूप बना लिये।

निराकार स्वरूप को मानने के लिये एक उदाहरण है- आप पानी को जैसे बर्तन में भरते हैं, उसका आकार धारण कर लेता है। आप बाल्टी में भरो तो बाल्टी का आकार धारण कर लेगा, आप गागर में भरो तो गागर का आकार धारण कर लेगा। सनातन धर्म की ओर से मानव को यह स्वतन्त्रता दी गयी है कि तुम्हें जैसे श्रीभगवान् चाहियें, वैसे श्रीभगवान् तुम पा सकते हो। स्वाभाविक रूप से मानव देहधारी है। मानव संसारी है तो उसने संसारी देव बनाये। मानव देहधारी है तो देह के साथ में श्रीभगवान् बनाये ताकि वह उनके साथ जुड़ सके। भक्ति करने की सारी विधाएँ दे दीं कि आप भक्ति मार्ग पर चलते हैं तो आप सगुण भक्ति भी कर सकते हैं और निर्गुण भक्ति भी कर सकते हैं।

शेष सारे धर्मों में केवल एक ही भक्ति बतायी गयी है- या तो सगुण या निर्गुण लेकिन एकमात्र हिन्दू धर्म ऐसा है जिसमें दोनों प्रकार की भक्ति बतायी गयी है।

प्रश्नकर्ता- मीना दीदी
प्रश्न- हम प्रचारक का कार्य करते हैं तो फॉर्म भरना आवश्यक होता है?
उत्तर- जी हाँ। गीता परिवार के बैनर से गीता परिवार का काम करना हो तो फिर आपको निर्धारित प्रक्रिया से आना पड़ेगा और आपको गीता परिवार के सारे नियमों को मानना पड़ेगा। आप काम कर सकती हैं लेकिन गीता परिवार के लिए जब काम करती हैं तो कार्यकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम होते हैं और जीवन के कुछ दिन आप गीता परिवार को देना चाहती हैं तो फिर एक प्रतिज्ञा लेकर ही काम किया जाता है। बड़ा आसान है। उसमें मुश्किल कुछ नहीं है। सङ्कल्प करना आवश्यक होता है।

किसी भी पूजा के पहले भी सङ्कल्प होता है जिसके बिना की गयी पूजा पूरी नहीं होती। इसी प्रकार प्रचारक के लिए भी सङ्कल्प लेना आवश्यक है।

अभी कुरुक्षेत्र में जो प्रचारकों ने सङ्कल्प लिया, उसमें स्वामी जी ने ये सङ्कल्प दिया था। कोई सङ्कल्प करके अनुष्ठान के रूप में करें, साधना के रूप में करें इसलिये सङ्कल्प दिया जाता है।

प्रश्नकर्ता- रविन्द्र भैया
प्रश्न- मैं यह पूछना चाहता हूँ कि जैसे "ऐसा होने वाला है, मैं इधर जाने वाला हूँ, पृथ्वी पर ऐसा होने वाला है" आदि सब पूर्व निर्धारित होता है या श्रीभगवान् ने हमें कुछ स्वतन्त्रता भी दी है। यदि है तो वह भाग कितना रहता है?
उत्तर- आपको कर्म क्या करने हैं, इसकी शत प्रतिशत स्वतन्त्रता आपको है क्योंकि श्रीभगवान् आपके अन्दर स्थित आत्मा के रूप में हैं और शेष सारी बातें हमारी पञ्चेन्द्रियाँ, मन बुद्धि अहङ्कार तथा पञ्च महाभूतों से बना हुआ शरीर है। ये सब प्रकृति की देन हैं। परमात्मा ने केवल आत्मा दिया, शेष सब कुछ प्रकृति से मिला है। बुद्धि भी प्रकृति की देन है तथा बुद्धि के अन्दर जो विवेक है, वह प्रकृति का दिया हुआ है और उस विवेक की पूरी स्वतन्त्रता है। उस पर आत्मा का कोई नियन्त्रण नहीं है।

वह इस प्रकार है जैसे प्रकृति और पुरुष का संयोग हुआ, उससे आपका शरीर तैयार हुआ लेकिन आपका विवाह हो गया। आपकी पत्नी ने आपसे एक दिन कहा कि चलो मेरे साथ सिनेमा देखने चलना है। अब आप मना भी नहीं कर रहे हैं या फिर साड़ी खरीदने जाना है और आप साड़ी खरीदने चले गये। अब क्या आपकी रुचि की साड़ी ली जायेगी या उसकी रुचि की साड़ी? प्राथमिकता किसको होगी?

आपका केवल परामर्श लिया जायेगा। आप दुकान में बैठते हैं पर क्या पूरी रुचि से आप देखते हो कि इसमें कैसा पल्ला है? इसका कैसा रङ्ग है। आप बोलते हैं कि आप चुन लो। पैसा देने का काम मैं करूँगा। उसकी हाँ में हाँ मिला देते हैं। उसी प्रकार आत्मा का काम इतना ही है। वह हाँ में हाँ मिलाता है। शेष सारा काम अपने विवेक से चलता है। बस एक बात है कि जब

विवेक चलाना है तब आप चिन्तन करते हैं।

प्रारब्ध से जो होना है, वह तो होना है। बारिश आनी है तो आनी ही है। वह आपके कुछ भी करने से रुकने वाली नहीं है क्योंकि कुछ बातें आपके नियन्त्रण के बाहर है। यह तय है कि इस दिन बारिश आएगी। आपने अपने विवेक से निर्णय किया कि मैं आज छाता लेकर जाऊँगा। छाता लेकर गये तो कम से कम उस बारिश में आपने अपने आप का बचाव किया और भीगने से आप बच गये। यह जो विवेक का निर्णय है, यह लेना आपके हाथ में है। बारिश आना या नहीं आना यह आपके हाथ में नहीं है। आपके हाथ में विवेकपूर्ण निर्णय लेना है जिससे आपकी हानि कम हो सके। आपको कष्ट कम हो सके।

उसी प्रकार से बुरा कर्म करें या अच्छा कर्म करें। ए बी सी डी का बी बर्थ या जन्म है, वह आपके हाथ में नहीं, डी डेथ या मृत्यु है, वह भी आपके हाथ में नहीं लेकिन बी और डी के बीच में सी आता है। जीवन के ए बी सी डी में सी जो है उसका अर्थ चॉइस अर्थात् चुनाव है और वह आपके हाथ में है।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(यँ) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'राजविद्याराजगुह्ययोग' नामक नवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||